साम्ब-पुराण के एक प्रक्षेप में

मगध-क्षेत्र में सूर्य-उपासना की प्राचीनता

पं. सुरेशचन्द्र मिश्र

सूर्य हमारे प्राचीनतम पूज्य देवता हैं। इनकी पूजा एवं माहात्म्य का विशद वर्णन साम्ब पुराण में प्रचुरता से उपलब्ध है। यों तो भारतवर्ष के अधिकांश क्षेत्रों में सूर्य देवता की पूजा होती है परन्तु बिहार के मगध क्षेत्र की सूर्य-पूजा की चमक कुछ और ही है। यह चमक क्यों है इसकी तह में जाने से पहले यह विचारणीय होगा कि बुद्ध का भ्रमण स्थल होने कारण इसका नाम बिहार पड़ा, परन्तु बिहार के एक क्षेत्र-विशेष को मगध क्यों कहा जाता है? फिर स्वत: प्रश्न उठ आता है कि जरासंध, अशोक आदि राजाओं ने भी इसके नाम मे कभी कोई परिवर्तन क्यों नहीं किया? मुझे जैसा लगता है, मगध क्षेत्र के अधिकांश घरों में सूर्य पूजा यानी सूर्य षष्ठी पूजा कार्त्तिक शुक्ल षष्ठी और चैत्र शुक्ल षष्ठी को बड़े धूम-धाम से सम्पन्न की जाती है। इसमें कठोर उपवास एवं पवित्रता का पूरा ध्यान रखा जाता है। व्रत धारण करनेवाली स्त्रियाँ एवं पुरुष उस समय लोगों को साक्षात् सूर्य देवता ही दिखाई पड़ते हैं। मगध की पूजा-पद्धति भी और जगहों से समानता रखते हुए भी कुछ विशेषता की वाहिका है।

हाँ, तो पहले यह साफ कर दूँ कि इसका नाम 'मगध' क्यों पड़ा। संभवत: सूर्य पूजकों को 'मग' कहा जाता है। 'मग' की पौराणिक व्याख्या है 'मार्त्तण्ड का ज्ञान रखनेवाला'। इसकी वैदिक व्याख्या है- ''मन्त्रोत्पादको गुरु:।''। अत: स्पष्ट है कि यहाँ सूर्य पूजक मगों की प्रधानता होने के कारण इस क्षेत्र का नाम 'मगध' पड़ा। मगान् सूर्यपूजकान् धारयति इति मगध:। अब मगध क्षेत्र की सूर्योपासना पद्धति पर थोड़ा दृष्टिपात करें-

(1) अगर एक साल आपने छठ व्रत करने की ठान ली तो यह व्रत अबाध आप की वंश परम्परा बन गया। ऐसा कठोर नियम अन्य जगहों में नहीं देखा जाता।

(2) अर्घ्य-डाली पर प्रथम वर्ष आपने जो वस्तुएँ रखीं हैं। प्रतिवर्ष उन वस्तुओं से ही अर्घ्य निवेदन किया जायगा।

(3) व्रती दो दिनों का कठोर उपवास करते है। इस अवधि में कंबल अथवा पुआल पर सोना विशेष फलदायक है।

(4) व्रती संयत के दिन से ही किसी से कठोर बात नहीं बोलते हैं।

(5) किसी को कड़ी नजर से देखना व्रत-विरुद्ध माना जाता है।

(6) पुरानी संयत एवं लोहंडा (चतुर्थी एवं पंचमी) के दिन प्रसाद खाने के लिए यथाशक्य विना भेदभाव के सबों को बुलाया जायगा, यहाँ जाति-पाति का भेद-भाव अत्यन्त वर्जित है।

(7) सूर्य प्रसाद का मूल मंत्र सबमें सम भाव है।

(8) षष्ठी तिथि व्रतियों के लिए पूर्ण उपवास का दिन है। इस दिन निर्जला व्रत धारण कर शाम को अस्ताचलगामी सूर्य को अर्घ्य दिया जाता है।

(9) सप्तमी तिथि को उगते हुए सूर्य को अर्घ्य प्रदान कर व्रती पारणा करते हैं।

(10) प्राय: देखा जाता है कि यह व्रत स्त्रियाँ अधिक करती हैं, पुरुष कम।

हमारे देश का कोणार्क मन्दिर शिल्पकला के लिए पूरे विश्व में ख्यात है। बृहत्तर बिहार यानी बिहार और झारखण्ड में सूर्य मन्दिर निम्न स्थानों में पाये जाते हैं- सूर्य मन्दिर औरंगाबाद जिले में 110 फीट ऊँचा देव नामक स्थान में विद्यमान है जो सम्भवत: 8वीं शताब्दी से भी पूर्व का माना जाता है। उमगा पहाड़ी पर का सूर्य मन्दिर भी इसी काल का कहा जाता है क्योंकि स्थापत्य, शिल्प आदि में समानता है। गया में विष्णुपद के पास एक सूर्यकुण्ड है एवं सूर्यनारायण की अति प्राचीन चतुर्भुज मूर्त्ति भी शोभायमान है। फल्गु नदी के तट पर 'गयादित्य' नामक मन्दिर है। गया जिले के शेरघाटी अनुमंडल में खुदाई से प्राप्त सूर्य मन्दिर बड़ा ही चित्ताकर्षक है। यह 5वीं शताब्दी का माना जाता है। सहरसा जिले का 'कन्दाहा' सूर्य मन्दिर 1453 ई0 का है। नालन्दा जिले में बिहार श्री(शरीफ) के पास 'बड़गाँव' का सूर्य मन्दिर अत्यन्त प्रसिद्ध है। उस मन्दिर से थोड़ी दूरी पर एक विशाल तालाब है। कहा जाता है कि जिसमें स्नान करने से कोई भी चर्म रोग सद्य: नष्ट हो जाता है। जिला बाढ़ के पास 'पुनारख स्टेशन है वहाँ पुण्ड्रार्क (पुण्यार्क) देवता का अति प्राचीन भव्य मन्दिर है। 'मग' ब्राह्मणों का एक 'पुर' 'पुण्यार्क' भी इसी गाँव के नाम पर पड़ा है। शेखपुरा जिले के 'बलवापर' गाँव में सूर्य देवता का मन्दिर है जिसमें सूर्य देवता सात घोड़ों से जुते रथ पर सवार हैं। जमुई जिले में मलयपुर गाँव के पास नदी तट पर सूर्यमन्दिर है जहाँ प्रतिवर्ष माघ में सूर्यसप्तमी के दिन दूर-दूर से आकर लोग पीली धोती पहन 'आदित्यहृदय-स्तोत्र' का सस्वर पाठ करते हैं। दरभंगा जिले के लहेरियासराय के पास राघोपुरा गाँव में 9वीं शताब्दी की एक सूर्य प्रतिमा प्राप्त हुई है। यह 4'6" की है।

साम्बपुराण जिसे उपपुराण कहा जाता है, सूर्योपासना का प्राचीनतम ग्रन्थ है। 'साम्ब-पुराण' सम्पादक पं0 श्री गौरीकान्त झा, एकेडमी प्रेस, दारागंज, इलाहाबाद में पं. भवनाथ झा द्वारा लिखित भूमिका से पता चलता है कि हेमाद्रि एवं लक्ष्मीधर के द्वारा उधृत होने के कारण यह 12 वीं शताब्दी पूर्व की रचना मानी है।

इससे पूर्व प्रकाशित साम्ब-पुराण में 84 (चौरासी) अध्याय हैं परन्तु इसके 27वें अध्याय में 1-23 तथा 85-92 तक के श्लोक ही उपलब्ध है, शेष बीच के 24-84 तक के श्लोक (कुल 61) अनुपलब्ध हैं।

यह अतिशय सौभाग्य की बात है कि पु0 श्लो0 पं0 अमरनाथ झा के पुत्र पं0 शम्भु नाथ झा एवं पं0 भवनाथ झा को इन अनुपलब्ध श्लोकों की पाण्डुलिपि इनके घर में में प्राप्त हुई। इन्होंने इसका प्रकाशन पं0 गौरीकान्त झा के सहयोग से करबाया। इसके लिए हम सनातन धर्मावलम्बियों की ओर से इन्हें कोटि-कोटि धन्यवाद एवं पाण्डुलिपि संचयन के प्रति इनके अदम्य उत्साह को साधुवाद।

यों पूर्व के अन्य अध्यायों से ही यह बात खुलकर साफ हो गई हे कि सूर्योपासक विप्र शाकद्वीप से जम्बूद्वीप भगवान् कृष्ण की प्रेरणा से उनके पुत्र साम्ब द्वारा लाये गये। साम्ब का कुष्ठ रोग दूर हुआ और उन्होंने भगवान् सूर्य का एक विशाल मन्दिर साम्ब पुर में बनवाया। पद्म पुराण में उल्लेख है कि उक्त मन्दिर जहाँ बना उसका पुराना नाम कश्यपपुर था। वह नगर कश्यप ऋषि ने बनवाया था। बाद उसका नाम साम्बपुर पड़ा। परन्तु 1024 ई0 में जब गजनबी ने आक्रमण किया एवं अपने अधीन

किया तब इसका नाम 'मुलतान' पड़ा। मुलतान में बहनेवाली नदी सरस्वती नदी की बहन चन्द्रभागा नदी थी। साम्ब पुराण में भी चन्द्रभागा नदी के तट पर ही मन्दिर बनाने की बात आई है।

साम्बपुराण के इस प्रक्षिप्त अंश से भी स्पष्ट है कि सूर्य के उपासक विप्र शाकद्वीप से आनीत होने के कारण शाकद्वीपीय कहलाये। ये कई नामों से ख्यात हैं, जिनकी व्याख्या निम्न प्रकार है-

1. मग - (आगम-शास्त्रीय व्याख्या) 'म' से मंत्र उत्पादक और 'ग' से गुरु। (पौराणिक व्याख्या)' 'म' से मार्तण्ड और 'ग' से ज्ञान।
2. भोजक- भाष्कर को भोग (नैवेद्य) चढ़ाकर भोजन करनेवाले।
3. ऋतव्रत- यज्ञों को शास्त्रोक्त विधि से सम्पन्न करानेवाले आचार्य।
4. याजक- यज्ञ करानेवाले को 'यज्वन' भी कहा जाता है, इसलिए 'याजक'।
5. योगेन्द्र- गिरि-कन्दराओं में ध्यानस्थ हो योग सम्पन्न करने के कारण 'योगेन्द्र'
6. मृग - मंत्र का सस्वर पाठ करने से 'मृग'।
7. भूदेव- भूमि पर श्रेष्ठ होने के कारण 'भूदेव'।
8. सेवक (सेवग)- देवताओं, अतिथियों के प्रति सेवा का भाव रखने के कारण सेवक या सेवग।
9. ग्रहविप्र- सूर्य ग्रहों में श्रेष्ठ हैं। इसके उपासक होने के कारण।

सप्तविंशतितमोऽध्यायः

बृहद्बल उवाच

भगवन् विस्तराद् ब्रूहि शाकद्वीपनिवासिनाम्।
विप्राणां सम्भवं पुण्यं कर्म चैव समाश्रयम्॥२४॥

बृहद्बल ने कहा- हे भगवन्! शाकद्वीप में निवास करनेवाले ब्राह्मणों के जन्म एवं उनके आश्रित पुण्य कर्म को आप विस्तार पूर्वक मुझसे कहें॥24॥

कथं समागता हित्वा शाकद्वीपं सुशोभनम्।
कियत्कालं स्थिता ह्यत्र गताः कुत्र पुनश्च ते॥२५॥

सुन्दर शाकद्वीप को छोड़कर वे क्यों यहाँ आये, कब तक ठहरे और फिर कहाँ चले गये॥25॥

वसिष्ठ उवाच

आज्ञया देवदेवस्य साम्बो गत्वा द्विजोत्तमान्।
आनयामास सम्पूज्य प्रणतो गरुडे स्थितान्॥२६॥

वसिष्ठ ने कहा

कृष्ण की आज्ञा से विनम्र साम्ब उन श्रेष्ठ ब्राह्मणों के पास जाकर, उनकी पूजा कर उन्हें गरुड़ पर बैठाकर ले आये॥26॥

द्वारवत्यां समायातान् गोविन्दस्तानपूजयत्।
पाद्यार्घाचमनाद्यैश्च मधुपर्कं निवेद्य च॥२७॥

द्वारिका में आये हुए उन ब्राह्मणों को कृष्ण ने पाद्य, अर्घ आचमन आदि से पूजा की और मधुपर्क भी निवेदित किया॥27॥

स्वागतं कुशलं पृष्ट्वा स्वस्थानासनसंस्थितान्।
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा तानुवाच हरिः स्वयम्॥२८॥

उन ब्राह्मणों को आसन देकर स्वागत कर एवं कुशल पूछ कर तथा दोनों हाथ जोड़कर स्वयं भगवान् ने उन्हें कहा॥28॥

प्रसादाद् भवतां साम्बः स्वस्थो नूनं भविष्यति।
सुमेरुशृङ्गे प्रतिमा या सूर्यस्यास्ति भासुरा॥२९॥
प्रकाशयन्ती ते लोक ते भासा स्वेन भूयसा।
भवतां तु प्रभावेण विद्यया ब्रह्मवर्चसा॥३०॥
आगमिष्यति सा भानोः प्रतिमा तैजसी विभोः।
स्वयमाह रविः साम्बं युष्माकं पुण्यविस्तरम्॥३१॥

आप ब्राह्मणों की कृपा से साम्ब निश्चित स्वस्थ हो जायेंगे। सूर्य की प्रतिमा जो समेरु पर्वत की चोटी पर देदीप्यमान है, जो अपने तेज से लोकों को बार-बार प्रकाशित कर रही है, आपसब की ब्रह्म तेज युक्त विद्या के प्रभाव से महान् सूर्य देव की वह तेजमयी प्रतिमा निश्चित आयेगी। ब्राह्मणों के इस विस्तृत यश के बारे में स्वतः सूर्य ने साम्ब से कहा॥29-31॥

ततस्ते ब्राह्मणाः सर्वे चन्द्रभागानदीतटे।
सूर्यस्यावाहनं चक्रुर्जपन्तोऽर्कं सनातनम्॥३२॥

बाद वे सभी ब्राह्मण चन्द्रभागा नदी के तट पर गये। वहाँ जाकर सनातन सूर्य का जप करते हुए ब्राह्मणों ने सूर्य का आवाहन किया॥32॥

तेषां मन्त्रप्रभावेण नद्यन्ते सलिलात्तदा।
उदतिष्ठद्रवेर्मूर्तिर्द्योतयन्ती दिशो दश॥३३॥

तब उन ब्राह्मणों के मंत्र प्रभाव से दसो दिशाओं को चमत्कृत करती हुई नदी के जल के मध्य से भगवान् सूर्य की मूर्त्ति प्रकट हुई॥33॥

तत्तेजसा जनास्तत्र स्थिताः मुद्रितलोचनाः।
असह्यं तेजसां पुञ्जं सोढुं शेकुर्न केचन॥३४॥

उस मूर्त्ति के असह्य तेज पुँज को वर्दाश्त कर सकने में वहाँ कोई समर्थ नहीं हो सका। सभी आँखे मूँद खड़े हो गये॥34॥

तुष्टुवुस्ते द्विजास्तत्र भगवन्तं दिवाकरम्।
जय देव जगन्नाथ जय विश्वप्रकाशन॥३५॥

प्रभाकर जय त्वष्टर्जय देव जगत्पते।
प्रसीद भगवंस्तेजस्त्वमेतत् संहर प्रभो॥३६॥

हे संसार के स्वामी देवता, हे संसार को प्रकाशित करने वाले, हे प्रभाकर, हे विश्वसर्जक, हे जगत्पति आपकी जय हो, ऐसा कहते हुए ब्राह्मणों ने उन्हें सन्तुष्ट किया और कहा- हे भगवान् आप प्रसन्न हों और लोकहित में अपने इस असह्य तेज को समेट लें॥35-36॥

दह्यन्ति प्राणिनः सर्वे सर्वं व्याकुलितं जगत्।
ततः स्तुतस्स भगवानभूदमृतदीधितिः॥३७॥

सभी प्राणी जल रहे हैं, समूचा संसार व्याकुल है ऐसी स्तुतिपरक प्रार्थना से भगवान् सूर्य प्रसन्न हुए और अमृतदायी किरणवाले हो गये॥37॥

ततस्ते ब्राह्मणा देवं सिंहासनगतं विभुम्।
समुद्यम्यानयामास मठे काञ्चनकुट्टिमे॥३८॥

बाद वे सभी ब्राह्मण आसन पर बैठे हुए उस महान् सूर्य देवता को यत्न पूर्वक स्वर्ण जड़ित मठ में ले आये॥38॥

पूजां चक्रुश्च विधिवद् धूपदीपादिकैस्ततः।
तत्पादाम्भोजपानीयैः साम्बन्ते सिषिचुः पृथक्॥३९॥

ब्राह्मणों ने धूप, दीप आदिकों से सूर्य देवता की विधिवत् पूजा की और उनके चरण कमल के जल से उन्होंने (ब्राह्मणों ने) साम्ब को अलग से स्नान कराया॥39॥

ततो दिव्यवपुः सद्यः साम्बो विगतकल्मषः।
बभूव रुचिराङ्गश्च तदा कान्ततरोऽभवत्॥४०॥

तब साम्ब का पाप दूर हो गया और शीघ्र वे दिव्य शरीर वाले हो गये। उनके सारे अंग अत्यन्त आकर्षक और सुन्दर हो गये॥40॥

बृहद्बल उवाच

नामानि वद तेषां च प्रभावो विस्तराच्छ्रुतः।
याजकानां समुत्पत्तिं ब्रूहि विस्तरतो मुने॥४१॥

बृहद्बल ने कहा-

हे मुनि, उनके प्रभाव मैंने विस्तार से सुन लिये अब उनके पूजकों के नाम और उत्पत्ति विस्तार से कहें॥41॥

वसिष्ठ उवाच

शृणु नामानि विप्राणां पावनानि शुभानि च।

मिहिरांशुः शुभांशुश्च सुधर्मा सुमतिर्वसुः।।४२।।

वसिष्ठ उवाच-

उन विप्रों के शुभ और पवित्र नामों को सुनें- मिहिरांशु, शुभांशु, सुधर्मा, सुमति, वसु।।42।।

श्रुतकीर्तिः श्रुतायुश्च भरद्वाजः पराशरः।
कौण्डिन्यः कश्यपो गर्गो भृगुर्भव्यमतिर्नलः।।४३।।

सूर्यदत्तोऽर्कदत्तश्च कौशिकश्चेति नामतः।
ते ततः कृष्णमित्याहुः कृतकार्या वयं विभो।।४४।।

श्रुतकीर्त्ति, श्रुतायु, भरद्वाज, पराशर, कौण्डिन्य, कश्यप, गर्ग, भृगु, भव्यमति, नल, सूर्यदत्त, अर्कदत्त और कौशिक- इन नामों से ये जाने जाते हैं। बाद उन ब्राह्मणों ने कृष्ण से कहा कि हे विभु, हमसब कृतकार्य हो गये।।43-44।।

आज्ञापय हृषीकेश गन्तुं नः पुनरेव हि।
यास्यामः स्वपुरं विष्णो नेह स्थातुञ्च शस्नुमः।।४५।।

हे हृषीकेश, हमलोगों को पुनः लौट जाने की आप आज्ञा दें। हे विष्णु, हमलोग अपने नगर को जायेंगे। हमलोग यहाँ ठहरना नहीं चाहते हैं।।45।।

तानुवाच ततः कृष्णः प्रणम्य द्विजसत्तमान्।
यावत्तिष्ठाम्यहं विप्राः मर्त्यलोकेऽत्र कार्यतः।।४६।।

तावद् भवन्तस्तिष्ठन्तु पूजयन्तो दिवाकरम्।
एषा मूर्तिश्च सूर्यस्य तावत्तिष्ठति पूजिता।।४७।।

तब कृष्ण ने उन ब्राह्मण-श्रेष्ठों को प्रणाम कर कहा- हे विप्र, जबतक मैं इस मर्त्यलोक में कार्यवश हूँ तबतक आप सभी सूर्य देवता की पूजा करते हुए रहें। यह सूर्य की पूजित मूर्त्ति भी तब तक ही रहेगी।।46-47।।

नान्यस्तेजसस्तस्य विप्रः कश्चन विद्यते।
यदा त्यक्ष्यामि भूलोंकं मूर्तिश्चैषा गमिष्यति।।४८।।

उनके तेज के समान कोई दूसरा विप्र नहीं है। जब मैं पृथ्वी लोक का परित्याग करूँगा, यह मूर्त्ति भी चली जायेगी।।48।।

तदा युष्मानयं विप्राः द्वीपान्तं प्रापयिष्यति।
ततस्ताक्ष्यं समाहूय जगाम गरुडध्वजः।।४९।।

हे विप्र, आपलोगों को द्वीपान्त तक पहुँचा दिया जायगा। बाद गरुड़ को बुलाकर भगवान् गरुड़ध्वज चले गये।।49।।

भवानेतान् द्विजान् विप्र संस्मृतः प्रापयिष्यति।
ताक्ष्यः प्रोवाच भगवन् प्रापयिष्याम्यहं पुनः।।५०।।

भगवान् ने गरुड़ से कहा कि आप ब्राह्मणों को इच्छित स्थान पर पहुँचा देंगे। इसपर गरुड़ बोला- मैं इन ब्राह्मणों को इच्छित स्थान पर पहुँचा दूँगा।।50।।

किन्त्वन्तरा भुवं चैवावतरिष्यति चेन्नहि।
तदा त्यक्ष्यामि तत्रैव सत्यमेतद्भवत्विति।।५१।।

किन्तु यदि ये विप्र पृथ्वी पर कहीं उतरना चाहें तो इन्हें वहीं उतार देंगे। ऐसा ही होगा।।51।।

इत्युक्तो गरुडोऽगच्छद् यथेष्टां गतिमात्मवान्।
इति निश्चितकर्माणः स्थितास्तत्रैव याज्ञिकाः।।५२।।

पूजयन्तो विवस्वन्तं तपस्यन्तश्च योगिनः।
योगासिद्धा महात्मानो निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः।।५३।।

ऐसा कह कर गरुड़ अपनी यथेष्ट गति से चल पड़ा। नियमित कर्म करनेवाले याज्ञिक, भगवान् सूर्य की पूजा और तपस्या करते हुए योगीजन, एकमना (निर्द्वन्द्व), धन संचय की कुंठा से मुक्त (निष्परिग्रह) योगसिद्ध महात्मा वहीं ठहर गये।।52-53।।

साम्बस्तत्रैव नित्यं वै तिष्ठंस्तुष्टाव भास्करम्।
एवं स्थितानां तेषां वै त्रिंशद्वर्षाणि व्यत्ययः।।५४।।

साम्ब वहीं ठहर गये और नित्य भगवान् भास्कर की पूजा करते हुए उन्हें सन्तुष्ट किया। इस तरह वहाँ रहते हुए उनलोंगों को तीन सौ वर्ष बीत गये।।54।।

कदाचिदग्रतस्तेषां पश्यतामेव सा कला।
उड्डीयाकाशमगमद् भास्यमाना स्तवै-स्तुता।।५५।।

अनेक स्तुतियों से प्रार्थित तेजस्विनी वह कला देखते हुए उनलोगों के आगे से ऊपर उड़कर आकाश चली गई।।55।।

ते तदात्मनि वै विष्णुं गतं त्यक्त्वा भुवस्थलम्।
विषादं परमं जग्मुश्चिन्त्यमाना जनार्दनम्।।५६।।

जनार्दन भगवान् विष्णु, पृथ्वी लोक छोड़ कर चले गये हैं ऐसा जानकर वे (याक्षिक) अपने में अन्त्यन्त चिन्तित हो गये।।56।।

विष्णुना सम्परित्यक्तं भूलोकं कलिरेष्यति।
कथमत्र वयं विप्रास्तिष्ठामः कलिकल्मषे।।५७।।

भगवान् विष्णु भू-लोक छोड़कर चले गये। कलियुग आनेवाला है (आयेगा)। इस पापग्रस्त कलियुग में हम ब्राह्मण कैसे रहेंगे।।57।।

ततस्ते गरुडं दध्युः स्मरन्तः पूर्वभाषितम्।
स्मृतमात्रं तदा तत्र प्रादुरासीत् खगेश्वरः।।५८।।

इसके बाद उन विप्रों ने पूर्व कथित गरुड़ का ध्यान किया। स्मरण मात्र से ही गरुड़ वहाँ उपस्थित हो गया।।58।।

प्रणम्य तान् द्विजानाह क्षणाद् वः प्रापयाम्यहम्।
शाकद्वीपं किमर्थं वा विषीदन्ति द्विजोत्तमाः॥५९॥

उन ब्राह्मणों को प्रणाम कर गरुड़ ने कहा- हे ब्राह्मण श्रेष्ठ, आप व्यर्थ ही विषाद करते हैं, मैं क्षणभर में ही शाकद्वीप पहुँचा दूँगा॥59॥

तत आरुह्य गरुडं ययुस्ते द्विजसत्तमाः।
गच्छतो ददृशुर्मार्गे जनतां व्याकुलां भृशम्॥६०॥

उसके बाद सभी ब्राह्मण श्रेष्ठ गरुड़ पर सवार हो कर चल पड़े। रास्ते में जाते हुए उनलोगों ने एक जगह अत्यन्त व्याकुल जनता को देखा॥60॥

उचुस्ते गरुडं केऽमी रुदन्ति भृशमातुराः।
तानुवाच खगो विप्रांस्तत्र राजास्ति मागधः॥६१॥
धृष्टकेतुरिति ख्यातः स रोगं कुष्ठमाप्तवान्।
सोऽग्निं प्रवेशं कर्तुं वै स्वयमत्र समागतः॥६२॥
ततोऽमी व्याकुला लोका रुदन्ति नगरोद्भवाः।

उन्होंने गरुड़ से कहा- क्यों ये अत्यन्त व्याकुल हैं और बार-बार रो रहे हैं? गरुड़ ने उन विप्रों से कहा, वहाँ धृष्टकेतु नामक प्रसिद्ध मगध का राजा है। वह कुष्ठ रोग से ग्रसित है और वह यहाँ अग्नि में प्रवेश करने के लिए आया है। इसीलिए नगर के लोग व्याकुल होकर रो रहे हैं॥61-62॥

ब्राह्मणा ऊचुः

अत्र न ब्राह्मणा केचिद्यत्पादाम्बु पिबेन्नृपः।
परमं स्वास्थ्यमागच्छेत किं वृथाग्नौ त्यजेदसून्॥६३॥

ब्राह्मण ने कहा- यहाँ ऐसे कोई ब्राह्मण नहीं है जिनके चरणोदक का पान राजा कर सकें और वे इन्हे पूर्ण स्वस्थ कर सकें। क्यों राजा अग्नि में व्यर्थ प्राण त्याग करते हैं॥63॥

भवादृशो द्विजः कश्चिद् यदि स्यात् द्विजसत्तमाः।
शाकद्वीपात् किमर्थं वा भवदागमनं भवेत्॥६४॥
पुण्यं यशश्च विपुलं भवतां तु भविष्यति।

गरुड़ ने कहा- आपके समान यहाँ यदि कोई ब्राह्मण होते तो शाकद्वीप से आपका आना ही क्यों होता। यदि आप ठीक कर देते हैं तो आपको पुण्य एवं महान् यश होगा॥64॥

तथेति प्रतिपन्नांस्तान् खगस्तत्रावतारयत्।
राजाथ गरुडं दृष्ट्वा परमं हर्षमाप्तवान्॥६५॥

ऐसा कहकर उन सिद्ध एवं गुणज्ञ ब्राह्मणों को गरुड़ ने वहीं उतार दिया। राजा गरुड़ को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए॥65॥

प्राणत्यागस्य समये गरुडो दृश्यते मया।
विष्णोस्त्रैलोक्यनाथस्य वाहनं पुण्यवर्धनम्॥६६॥

प्राणत्याग के समय मैंने गरुड़ देखा। त्रिलोक के स्वामी भगवान् विष्णु का वाहन पुण्य को बढ़ाने वाला होता है।।66।।

प्रणम्य स्वागतं चेति हर्षाद् गरुडमब्रवीत्।
ततस्तं गरुडः प्राह किं तनुं त्यक्तुमिच्छसि।।६७।।

(राजा ने) हर्ष से प्रणाम कर और स्वागत कर गरुड़ से कहा। बाद गरुड़ ने राजा से (तम्) कहा, क्यों शरीर त्याग करना चाहते हो।।67।।

ब्राह्मणानाममीषां च पिबस्व चरणोदकम्।
विमुक्तोऽस्माद्रुजस्तूर्णं परं स्वास्थ्यमवाप्स्यसे।।६८।।

(तुम) इन ब्राह्मणों के चरणोदक का पान करो। शीघ्र इस रोग से मुक्त हो जाओगे और उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त हो जायेगा।।68।।

ततः स राजा तान् विप्रान् शिरसा प्रणनाम ह।
उवाच प्राञ्जलिर्धन्यो ह्यहं जातोऽस्मि साम्प्रतम्।।६९।।

बाद राजा ने उन ब्राह्मणों को सिर झुका कर प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहा, मैं इस समय धन्य हो गया।।69।।

वसिष्ठ उवाच

ततोऽस्मिन् मिहिरांशुः स्वं प्रादाद् वै चरणोदकम्।
पपौ च तं नृपस्तूर्णं जातश्च विमलद्युतिः।।७०।।

वसिष्ठ ने कहा- इसी समय सूर्य के समान तेज वाले उन ब्राह्मणों ने प्रसन्नता पूर्वक चरणोदक दिये। राजा ने चरणोदक पान किया और वह शीघ्र कान्तिमान हो गया। (नीरोग हो गया)।।70।।

विरजस्कं क्षणाद्रूपं दृष्ट्वा लोकाः प्रशंसिरे।
तुष्टुवुश्च द्विजान् हर्षात् प्रणम्य शिरसा मुहुः।।७१।।

क्षणभर में ही राजा के साफ-सुथरे रूप को देखकर लोगों ने प्रशंसा की। राजा ने हर्ष से बार-बार नतमस्तक हो ब्राह्मणों को सन्तुष्ट किया।।71।।

राजा च प्रणतः प्राह भवन्तो ब्राह्मणाः समाः।
पुण्यात्मानः शुभाचाराः जगत्पावनपावनाः।।७२।।
दासभावं गतोऽस्म्यद्य युस्माकं मुनिसत्तमाः।
आज्ञापयध्वं मे राज्यं सर्वं वा भवतामपि।।७३।।

राजा ने प्रणत हो कर ब्राह्मणों से कहा, (मुनि श्रेष्ठ), पुण्यात्मा, उत्तम आचार-विचार वाले, संसार को पवित्र करनेवाले, मुनि सत्तम (मुनि श्रेष्ठ) आपसबों का आज मैं दास हो चुका हूँ। आज्ञा कीजिए, मेरा सारा राज्य आपका ही है।।72-73।।

ते ततस्तु नृपं प्रोचुः साधु सर्वं सुभाषितम्।

धर्मेण पालयन् लोकान् कुरु राज्यमकण्टकम्।।७४।।

उन ब्राह्मणों ने राजा से कहा, आपकी सारी बातें सुन्दर हैं। आप धर्मपूर्वक लोगों का पालन-पाषण करें और राज्य को निष्कण्टक करें।।74।।

अस्माकमाज्ञया राजन् सूर्यस्य प्रतिमामिह।
स्थापयस्व विधानेन तस्याः पूजापरो भव।।७५।।

हे राजन! हमसबों की आज्ञा से आप यहाँ विधानपूर्वक सूर्य प्रतिमा की स्थापना करें और उनकी पूजा में मग्न हो जायें।।75।।

भक्तिः सूर्ये सदा कार्य्या त्वया मागधसत्तम।
सूर्ये सम्पूजिते देवे सर्वे स्युः पूजितास्त्वया।।७६।।

हे मागधश्रेष्ठ! आपको सदा सूर्य की भक्ति करनी चाहिये। सूर्य देवता की पूजा कर लेने पर सभी देवता पूजित समझे जाते हैं।।76।।

आज्ञापय वयं यामः शाकद्वीपमतः परम्।
तान् गन्तुकामानभ्येत्य गरुडः प्राह याज्ञिकान्।।७७।।

तिष्ठध्वं यूयमत्रैव समयं स्मरतः स्वकम्।
आज्ञा चैवास्ति कृष्णस्य स्थातुं युष्माकमत्र वै।।७८।।

प्रतिज्ञा या कृता पूर्वं सा न त्याज्याभवादृशैः।
गरुड़स्तांस्ततो नत्वा ययौ तूर्णं विहायसा।।७९।।

आप आज्ञा दें। इसके बाद हमलोग शाकद्वीप जाना चाहते हैं। उन याज्ञिकों को जाने का इच्छुक समझकर गरुड़ ने कहा- 'आपलोगों को स्वयं समय का स्मरण करते हुए यहाँ ठहरना चाहिये। वस्तुतः कृष्ण की भी आज्ञा है कि आप सभी यहाँ ही ठहरें। आप जैसे लोग अपनी पूर्व की गई प्रतिज्ञा को नहीं तोड़ते हैं।' ऐसा कहकर गरुड़ उनसब को प्रणाम कर आकाश मार्ग से तेज गति से चल पड़ा।।77-79।।

वसिष्ठ उवाच

ते विषादं परं जग्मुः वञ्चिताः स्मः पतत्रिणा।
न स्थेयमत्र चास्माभिः कथं भूप व्रजामहे।।८०।।

वसिष्ठ ने कहा- वे सभी गरुड़ से अपने को ठगा हुआ समक्ष कर अत्यन्त विषाद-ग्रसित हो गये। हमलोगों को यहाँ नहीं ठहरना चाहिये, हे राजा, हमलोग कैसे जायें?।।80।।

इति तान् व्याकुलान् दृष्ट्वा व्यासाद्याः मुनयस्तदा।
समागत्य शनैरेतां सान्त्वयामासुरादृताः।।८१।।

तब व्यास आदि मुनि उनसब को अत्यन्त व्याकुल देखकर धीरे से वहाँ आये और सान्त्वना

दी।।81।।

मा विषीदत भो विप्राः स्थेयमत्र मुमुक्षुभिः।
पुण्यो भरतखण्डोऽयं सिद्धिं नूनमवाप्स्यथ।।८२।।

हे ब्राह्मण! आपलोग दुखी न हों, मुक्ति चाहनेवाले लोगों को यहाँ ठहरना चाहिये। यह पुण्यमय भरतखण्ड है, आपलोगों को यहाँ निश्चित सिद्धि मिलेगी।।82।।

पावनार्थं पृथिव्यां वा ध्रुवं स्थास्यति सन्ततिः।
राजा च प्रणतो भूत्वा तानुवाच कृताञ्जलिः।।८३।।

पवित्र करने के लिए पृथ्वी पर निश्चित सन्तति रहेगी। राजा ने होकर, हाथ जोड़कर उन ब्राह्मणों से कहा।।83।।

लोकानां पावनार्थाय यूयमत्र समागताः।
ग्रामान् वः प्रतिदास्यामि भागीरथ्यास्तटे शुभे।।८४।।

आपसब का आगमन यहाँ संसार को (मनुष्यों को) पवित्र करने के लिये हुआ है। पवित्र (शुभ) गंगा के किनारे आप सबको गाँव दूँगा।।84।।

इस प्रक्षिप्त अंश का ऐतिहासिक महत्त्व देखते हुए सुधी पाठकों के लिए प्रकाशित किया गया।

❑

सब दुःखों की जड़ - तृष्णा

''प्रमादरत मनुष्य की 'तण्हा' (तृष्णा) की भाँति बढ़ती ही जाती है। वह एक वस्तु से दूसरी वस्तु प्राप्त करने की होड़ में जीवन यापन करता है- चंचल इतना कि एक दबता है, तो दूसरा उठता है और उसका मन इतना चंचल कि वह मँझधार का जीवन जीता है। यह तृष्णा जिसे जकड़ लेती है, उसे शोकग्रस्त कर जीवन को प्रायः क्षत-विक्षत कर देती है। इस दुर्जेय तृष्णा पर जो इस जगत् में काबू पा लेता है, उसका शोक इस प्रकार झड़ जाता है जिस प्रकार कमल के पत्ते पर जल के बिन्दु। जैसे जड़ के पुष्ट होने के कारण कटा हुआ वृक्ष फिर से उग आता है, वैसे ही जबतक तृष्णा की जड़ न कटे, तब तक दुःख बराबर पैदा होता रहेगा। राग युक्त संकल्प के श्रोत चारो ओर बह रहे हैं जिसके कारण तृष्णा रुपी लता अकुंरित होती रहती है और जड़ पकड़ती रहती है। जहाँ कीं भी तुम यह लता पकड़ती हुई देखा, वहीं प्रज्ञा की कुल्हाड़ी से उसकी जड़ काट डालो। प्रज्ञा, शील समाधिस्थ (स्थितप्रज्ञ) जीवन संपन्न कर अच्छे और नीति मार्ग पर प्रतिक्षण चल कर अच्छे काम करते रहने से मन की वृति चंचल नहीं होता, भटकता नहीं- तृष्णा का भी नाश स्वतः होता रहता है''- भगवान बुद्ध की वाणी।

डा. एस. एन.पी. सिन्हा के सौजन्य से